जैव विकास 2: जीवन का वृक्ष पृथ्वी पर पनपा

माधव गाडगिल

जैव विकास की बात करते ही हमारी आंखों के सामने महाकाय डायनासौर उभरते हैं। पृथ्वी पर मौजूद जीवधारी धीरे-धीरे बदलते रहते हैं। जैव विकास की प्रक्रिया में अधिक जटिल शरीर रचना वाले जीवधारी बनते हैं - इसका सबसे ठोस प्रमाण है डायनासौर जैसे जीवधारियों के फॉसिल यानी जीवाश्म। यह तथ्य जैव विकास की अवधारणा की पुष्टि ही करता है कि अब लुप्त हो चुकी प्रजातियों के अवशेष चट्टानों में दबे हुए पाए जाते हैं। इसके विपरीत, जीवाश्मों की उपस्थिति बाइबल की उस अवधारणा से मेल नहीं खाती जिसके अनुसार ईश्वर ने सारे जीवधारी वैसे ही बनाए थे जैसे वे आज नज़र आते हैं। जैव विकास की अवधारणा के अनुसार गहराई में स्थित चट्टानों में पाए जाने वाले जीवाश्म ऊपरी सतहों की चट्टानों की तुलना में अधिक सरल शरीर रचना वाले होंगे। इस बात की पड़ताल की जा सकती है और यह प्रमाणित भी हो चुका है।

किंतु जीवाश्मों की उपस्थिति से कई सवाल भी उपजते हैं। कड़े कवच या कंकाल वाले जंतु और काष्ठ से बने पौधों के जीवाश्म तो बहुतायत में पाए जाते हैं। किंतु ये सब जैव विकास की दृष्टि से हाल के समय के यानी पिछले साठ करोड़ वर्षों की अवधि के हैं। इनसे बहुत पहले भी पृथ्वी पर ऐसे जीवधारी ज़रूर रहे होंगे जिनके शरीरों में कोई भी कड़े अंग नहीं थे। फिर क्या उनके कोई अवशेष हैं ही नहीं?

पचास वर्ष पहले ऐसे अवशेष पाए गए थे जो सायनोबैक्टीरिया नामक सूक्ष्म जीवधारियों के जीवाश्म थे। बिलकुल सरल शरीर रचना वाले सायनोबैक्टीरिया आकार में तो एक मिलीमीटर के सौवें भाग के बराबर होते हैं, किंतु उनकी लंबी-लंबी श्रृंखलाओं से रेत के कण और अन्य सूक्ष्म जीवधारियों के चिपक जाने के कारण चटाई के समान रचनाएं बन जाती हैं। इन चटाइयों से समुद्र के किनारों पर स्ट्रोमैटोलाइट नामक चट्टानें बन जाती हैं। सायनोबैक्टीरिया से साढ़े तीन अरब वर्ष पहले बने स्ट्रोमैटोलाइट पाए गए हैं। ऐसे स्ट्रोमैटोलाइट ऑस्ट्रेलिया के उत्तर-पूर्व में स्थित ग्रेट बैरियर रीफ नामक टापू पर आज भी बन रहे हैं।

स्ट्रोमैटोलाइट

सायनोबैक्टीरिया ने पृथ्वी पर पहली बार क्लोरोफिल नामक हरे पदार्थ की मदद से प्रकाश ऊर्जा का उपयोग करके शर्करा बनाना शुरू किया था। इस प्रक्रिया में ऑक्सीजन भी बनने लगी। इस प्रारंभिक समय में पृथ्वी के वातावरण और पानी में ऑक्सीजन बहुत ही कम मात्रा में थी। इस प्रक्रिया से जैसे-जैसे ऑक्सीजन की मात्रा बढ़ने लगी, सायनोबैक्टीरिया ऐसे एंज़ाइम्स से लैस होने लगे जो ऑक्सीजन से बचाव करते हुए व्यवस्थित रूप से उसका उपयोग करते थे। ऑक्सीजन के उपयोग का परिणाम यह हुआ कि शर्करा के हर अणु से पहले के मुकाबले बहुत अधिक ऊर्जा मिलने लगी। इस कारगर प्रणाली के बल पर सायनोबैक्टीरिया ने उन जीवधारियों को पीछे छोड़ दिया जो ऑक्सीजन का उपयोग नहीं कर पाते थे।

सजीवों का अध्ययन करने वालों के सामने यह बड़ा प्रश्न है कि जीवन आपसी सहयोग भरी एक यात्रा है या एक संघर्ष है जिसमें गलाकाट प्रतियोगिता चल रही है। यह तो तय है कि जीवन में सहयोग भी है और संघर्ष भी। अब तक के सारे सिद्धांत संघर्ष की भूमिका पर ही बल देते आए हैं। किंतु जैसे-जैसे जीव विज्ञान की समझ गहरी होती जा रही है वैसे-वैसे यह स्पष्ट होता जा रहा है कि एक बड़े पैमाने पर जीवन एक सहयोग भरा उपक्रम भी है। जैव विकास के पथ पर जीवन लगातार फैलता रहता है, नए-नए संसाधनों का उपयोग करने लगता है, विविधता से लैस

होता रहता है। इसके साथ ही जीवन का ताना-बाना, आपसी सम्बंध अधिक से अधिक जटिल होते जाते हैं। इसका सामना करने के लिए अधिक से अधिक जटिल सूचना का उपयोग करना पड़ता है। सूचना के अधिकाधिक उपयोग करने की यह क्षमता उपजती तो है संघर्ष की चुनौती से, किंतु सहयोग के आधार पर।

दो अरब वर्ष पहले ऑक्सीजन की मात्रा बहुत बढ़ जाने के बाद हुई घटनाएं इस संघर्ष व सहयोग की जुगलबंदी का एक अनोखा उदाहरण है। सायनोबैक्टीरिया से पहले आर्किया नामक एक अन्य समूह के सूक्ष्म जीवधारी पृथ्वी पर आ चुके थे। एक ओर सायनोबैक्टीरिया प्रकाश की ऊर्जा का दोहन करने लगे तो दूसरी ओर, कुछ अधिक सक्षम आर्किया अन्य जीवधारियों का शिकार करने लगे। कुछ आर्किया सायनोबैक्टीरिया को अपना शिकार बनाते थे। किंतु संयोगवश आर्किया द्वारा निगले गए सारे सायनोबैक्टीरिया का पूरी तरह पाचन नहीं हो पाया और वे आर्किया की कोशिकाओं का अंग बन कर रहने लगे। इन नवनिर्मित जोड़ियों में से बड़े आकार की कोशिकाएं अपने अंदर स्थित सायनोबैक्टीरिया की मदद से प्रकाश की ऊर्जा का इस्तेमाल करने लगीं। इन्हीं से एककोशिकीय शैवाल बने। शैवाल की कोशिकाओं में जो क्लोरोफिल धारी अंग (क्लोरोप्लास्ट) होते हैं वे मूल रूप से सायनोबैक्टीरिया ही हैं। आगे चलकर जैव विकास की धारा में बहुकोशिकीय वनस्पति पृथ्वी पर अस्तित्व में आई। अर्थात सभी वनस्पतियों के हरे रंग यानी क्लोरोप्लास्ट के मूल स्रोत सायनोबैक्टीरिया ही हैं। यानी मूलतः इन्हीं ने धरती को हरी चुनरिया पहनाई है।

देखा जाए तो आधुनिक पौधों की तुलना में सायनोबैक्टीरिया काफी अधिक सफल हैं। उनकी संख्या बहुत अधिक है, वे प्रजनन क्षमता में आगे हैं और गहरे समुद्र से लेकर बिलकुल सूखी चट्टानों तक फैले हुए हैं। अर्थात जैव विकास का मतलब यह कदापि नहीं होता कि सब मायनों में पिछड़ी हुई, हीन गुणों वाली प्रजातियों से अधिक से अधिक उन्नत प्रजातियां बनती रहती हैं। ऐसी कई सरल और प्राचीन प्रजातियां हैं जो काफी सफल और सक्षम हैं।

किंतु ऐसा भी नहीं है कि जैव विकास की धारा बिलकुल ही दिशाहीन हो। कुछ कसौटियों से देखा जाए तो आधुनिक प्रजातियां प्राचीन प्रजातियों से निश्चित रूप से उन्नत हैं। उनकी संरचना, उनकी जीवन क्रियाएं अधिक जटिल और अधिक मिश्रित हैं, वे अधिक जानकारी से लैस हैं और उनमें सूचना का भंडार अधिक है। उदाहरण के लिए धान के एक पौधे के निर्माण के लिए एक सायनोबैक्टीरिया के निर्माण की अपेक्षा काफी अधिक सूचना की ज़रूरत होती है।

सारांश यही है कि जैव विकास प्रगतिशील तो है, किंतु इसकी धारा एक सीधी सीढ़ी चढ़ने के समान नहीं है। जैव विकास एक वृक्ष के समान है जिसकी वृद्धि अलग-अलग ऊंचाइयों पर शाखाओं के निकलने के कारण हो रही है। इस वृक्ष की जड़ जीवन की वे शुरुआती अवस्थाएं हैं जिनमें से कई का अस्तित्व आज समाप्त हो चुका है। तना, शाखाएं और उपशाखाएं वे जैविक कुल (फेमेली) हैं जो जैव विकास की धारा में समय-समय पर अस्तित्व में आए हैं। इनमें से कुछ लुप्त हो चुके हैं तो कुछ आज भी जीवित हैं। पत्ते वे प्रजातियां हैं जो आज जीवित हैं। इस ज्ञानवृक्ष को साकार करने वाले कुल और प्रजातियां जितनी अधिक सूचना से लैस होते हैं उतने ही वे भूमि से अधिक ऊंचाई पर होते हैं।

सूचना का यह भंडार नौ चरणों में अधिकाधिक बढ़ता गया। शुरुआत से लेकर आज तक पृथ्वी की 450 करोड़ वर्ष की आयु को यदि 24 घंटों के बराबर माना जाए तो 20 घंटे पहले (करीब 375 करोड़ वर्ष पूर्व) आरएनए (राइबो न्यूक्लिक एसिड) के सूचना-प्रचुर अणु एक आदिम कोशिका के रूप में व्यवस्थित हो गए और जीवन के वृक्ष की शुरुआत हुई। आरएनए वह अणु है जो सूचनाओं को भंडारित भी कर सकता है और उस सूचना के अनुसार कार्य निष्पादन भी कर सकता है। इस दृष्टि से यह एक हरफनमौला अणु है।

दूसरे चरण में हरफनमौला आरएनए अणु के स्थान पर दो भूमिकाओं के लिए दो अलग-अलग अणु सामने आए - सूचना-वाहक डीएनए (डीऑक्सीराइबो न्यूक्लिक एसिड) अणु और चलायमान कार्यकारी प्रोटीन अणु।

तीसरे चरण में सूचनायुक्त अणु एक सूत्र में व्यवस्थित हो गए और सूचना का भंडार अधिक सुसंगठित हो गया।

चौथा चरण लैंगिक प्रजनन का था जिसमें दो अलग

स्रोतों की सूचना एक स्थान पर लाई जाने लगी। सूचना का सम्मिश्रण होने लगा।

पांचवे चरण में आर्किया एवं सायनोबैक्टीरिया जैसे बिलकुल अलग-अलग प्रकार के जीवधारी आपस में मिल गए और बड़ी कोशिकाएं बनीं जिनमें सूचना का काफी बड़ा भंडार था।

छठे चरण में एककोशिकीय जीवधारियों से बहुकोशिकीय जंतु और वनस्पति बने।

सातवें चरण में ऐसे जंतु बने जिनमें तंत्रिका तंत्र उपस्थित था और इसके कारण सूचना की एक नई धारा बह निकली।

पृथ्वी के इस इतिहास में केवल एक घंटे पहले आठवें चरण में ऐसे जीवधारी बने जिनके सदस्यों में श्रम विभाजन संभव था। अंतिम नौवां चरण पृथ्वी के केवल एक सेकंड के बराबर है जिसमें भाषा का उपयोग कर सकने वाले मानव ने पदार्पण किया। भाषा सौ-डेढ़ सौ ध्वनियों को व्यवस्थित ढंग से गूंथकर बना हुआ ज्ञान के भंडार का एक अनोखा और लगातार वृद्धि करने वाला माध्यम है। यही कारण है कि ज्ञान से भरपूर, भाषा का उपयोग कर सकने वाला मानव, स्तनधारी जंतुओं की शाखा पर सबसे ऊपर लहराने वाला पत्ता है। (वैसे कई लोग इस विचार से सहमत नहीं हैं कि मानव को सबसे विकसित जीवधारी माना जाए क्योंकि सबसे विकसित किसे माना जाए यह इस बात पर निर्भर है कि आप 'विकास' की क्या परिभाषा चुनते हैं। ***(स्रोत फीचर्स)***